International Journal of Multidisciplinary EducationAnd Research
www.multidisciplinaryjournals.in
ISSN: 2455-4588
Received: 24-01-2023, Accepted: 10-02-2023, Published: 25-02-2023
Volume 8, Issue 1, 2023, Page No. 97-98

साहित्य समाज का अन्तः सम्बन्ध

डॉ. अनीता यादव
सह–आचार्य, (हिन्दी), राजकीय महाविद्यालय, बून्दी, राजस्थान, भारत

सारांश
साहित्य और समाज का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों एक दूसरे के पूरक है। साहित्य समाज का दर्पण एवं प्रतिबिम्ब है। साहित्य द्वारा ही हम अपने राष्ट्रीय इतिहास से, अपने देश की गौरव गरिमा से अपनी संस्कृति एवं सभ्यता से अपने पूर्वजों के अनुभव से विचारों एवं अनुसंधानों से अपने प्राचीन रीति–रिवाजों से रहन–सहन और परम्पराओं से परिचय प्राप्त कर सकते है। साहित्य समाज की चेतना का परिष्कार कर नवीन स्फूर्ति प्रदान करता है। मानव समाज की आवश्यक ऊर्जा माना जाता है। वह मनुष्य को अत्याचार, और अभाव से लड़ने की शक्ति देता है। स्वहित तथा लोकहित का अन्तर समझाता है। लोकमंगल की भावना जागृत कर भविष्य के प्रति आशा एवं उत्साह का भाव जगाता है। साहित्य का सौन्दर्य उसकी सामाजिक उपयोगिता ही है। वह व्यक्ति और सामाजिक रूप में मानव कल्याण का उपकारक और उपद्वेष्टा है। इससे ही सत्य, शिव, सुन्दरम् की भावना पल्लवित होती है।

मूल शब्दः अर्न्तसम्बन्ध, निर्माणक, चेतना, प्रतिबिम्ब, मानवतावाद, संस्कृति, जीवन मूल्य, समाज

मनुष्य ने सामाजिक जीवन अपनाकर अपनी भाषा का विकास किया और उसके माध्यम से अपने अनुभवों को ज्ञानरूप में संचित करने का प्रयास किया इसे ही आगे चलकर साहित्य कहा जाने लगा।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने साहित्य की यह परिभाषा दी है– ''ज्ञान राशि के संचित कोष का नाम ही साहित्य है।

मैथ्यू आरनोल्ड ने लिखा है – Poet And Age React upon each other-

अर्थात् कवि और काल विशेष परस्पर प्रभावी होते है। साहित्यकार काल विशेष में समाज से प्रभावित रहता है तथा उस पर प्रभाव भी डालता है। साहित्य की रचना प्रक्रिया में समाज और व्यक्ति का अभि–सम्बन्ध है। सच तो यह है कि साहित्य की पूरी सामग्री समाज देता है और उसके द्वारा प्रदत्त सामग्री को रचनाकार शिल्प की तकनीक देता है। इस तरह साहित्य का पूरा अन्तर्बाह्य गठन वस्तु और शिल्प के योग से होता है। जब हम साहित्य और समाज के सम्बन्धों पर विचार करते हैं तब हमें न केवल आज के हिन्दी साहित्य बल्कि सारे विश्व वाड्मय की मूल रचना प्रक्रिया में समाज की अनिवार्यता निर्विवाद मालूम होती है। ''साहित्य शब्द की व्याख्या हितेन सह सहितं–हित के साथ होना अर्थात् जिसमें मानव हित का सम्पादन हो उसे साहित्य कहते हैं। हित का सम्पादन चाहे आवश्यकता पूर्ति के रूप में हो चाहे सौंदर्य अनुभूति द्वारा मानव–कल्याण के रूप में हो। यही हित साधना साहित्य को संरक्षणीय बनाती है (1)।''

साहित्य मानव के सामाजिक सम्बन्धों को दृढ़ बनाता है, क्योंकि उसमें सम्पूर्ण मानव जाति का हित समाहित रहता है। साहित्य द्वारा साहित्यकार अपने भाव और विचारों को समाज में प्रसारित करता है। इस कारण उसमें सामाजिक जीवन स्वयं मुखरित हो उठता है।

विश्व में विभिन्न देशों, जातियों और उनके इतिहास, दर्शन या संस्कृति के बारे में साहित्य से ही जान सकते है। साहित्य ने सामाजिक जीवन को विम्बित ही नहीं किया है समाज का दिशा निर्देशन भी किया है। इस समाज से अपने अटूट सम्बन्ध को सिद्ध किया है। साहित्य की शक्ति सर्वोपरि है। इसके सामने बड़ी से बड़ी शासकीय शक्ति भी पराभूत हो जाती है। इसमें समाज को बदल डालने की अद्भुत शक्ति है। अकबर इलाहाबादी ने कहा था – कि तलवार के मुकाबले भी अखबार ही सबल सिद्ध होगा। महावीर द्विवेदी ने भी स्पष्ट किया– साहित्य में जो शक्ति छिपी रहती है यह तोप, तलवार और बम के गोले में भी नहीं पायी जाती। समाज शरीर है तो साहित्य उसका मस्तिष्क है।

साहित्य और समाज का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध के संदर्भ में डॉ. भागीरथ मिश्र ने ठीक ही लिखा है– साहित्य और समाज का अटूट और अगाध सम्बन्ध है। समाज की जीवन धारा में साहित्य का कमलवत् विकास होता है। वह समाज की धरती पर उगने वाले जीवन का फूल है साहित्य सुगन्ध है, मधुरिमा है वह रूप सौन्दर्य और प्रगति के प्रभाव का साकार चित्र है (2)।

साहित्य और समाज के इस अटूट सम्बन्ध को हम विश्व इतिहास के पृष्ठों में भी पाते है। फ्राँस की राज्य क्रान्ति के जन्मदाता वहाँ के साहित्यकार रूसों और वाल्टेयर है। इटली के मैजिनी के लेखों ने देश को उत्थान की ओर अग्रसर किया। हमारे देश में प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में भारतीय ग्राम्यों की आँसुओं से भीगी व्यथा को प्रस्तुत किया। उन्होंने किसानों पर जमीदारों द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों का चित्रण कर जमीदारी प्रथा उन्मूलन और भूमि सुधार की दृष्टि में भी प्रयत्न किये। वे प्रेमचन्द आदि साहित्यकारों के निर्देशन के ही परिणाम है। बिहारी ने एक दोहे की रचना से ही राज्य के प्रति उदासीन राजा जयसिंह को राज्यकार्य की ओर उत्प्रेरित किया था। निश्चय ही साहित्य अंसभव को संभव बना देता है। साहित्य की शक्ति अपरिमित है। दोनों कदम से कदम मिलाकर चलते है। बिना समाज के साहित्य जीवित नहीं रह सकता और बिना साहित्य के समाज का स्पष्ट प्रतिबिम्ब नहीं देखा जा सकता।

''अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं है।
मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं है।''

दोनों एक दूसरे के पूरक है। साहित्य का प्रतिभा प्रासाद समाज के वातावरण पर ही खड़ा होता है।

साहित्य का कार्य गिरते हुए को सहारा देना है। असन्तुलित को सन्तुलित बनाना है। जीर्ण शीर्ण का पुनरूद्वार करना है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब माना है। साहित्य की सामाजिक चेतना को लक्ष्य कर डॉ. श्याम सुन्दर दास ने भी लिखा है– सामाजिक मस्तिष्क अपने पोषण के लिए जो भाव सामग्री

निकालकर समाज को सौंपता है उसके संचित भंडार का नाम साहित्य है। अतः किसी जाति के साहित्य को हम उस जाति की सामाजिक शक्ति या उसका सभ्यता निर्देशक कह सकते हैं। वह उसका प्रतिरूप, प्रतिछाया या प्रतिबिम्ब कहला सकता है। जैसी उसकी सामाजिक व्यवस्था होगी वैसा ही उसका साहित्य होगा (3)।

समाज का निर्माण व्यक्ति समूह से होता है और साहित्य का निर्माण भावों और विचारों के लिपिबद्व समूह से। साहित्य की आवश्यकता समाज और व्यक्ति दोनों के लिए अनिवार्य है। साहित्य किसी समाज का मार्गदर्शक आलोक शिखर होता है। वह समाज के भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों की सामग्री अपने में संजोये रखता है।

समय साक्षी है कि प्रत्येक देश का समाज साहित्य से प्रभावित हुआ है। समाज जैसा होगा साहित्य उसी के अनुरूप होगा। साहित्य सृजना के मूल में समाज एक अनिवार्य तत्व है। साहित्य में है और होना चाहिए दोनों के भाव निहित होते हैं। जहाँ साहित्य समाज का विवरण देता है वहाँ वह समाज साक्षी व्याख्याता होता है और जहाँ समाज की यथास्थिति से विद्रोह करता है। वहाँ वह आदर्श समाज की रूप रेखा भी प्रस्तुत करता है। संसार के साहित्य का एक बड़ा भाग लोकहित परके साहित्य का है। संसार के साहित्य में उन्हीं रचनाओं का प्रमुख स्थान है। जिन्होंने मानवता की रक्षा, उसके शिवम या उद्देश्य को अपने में निहित रखा है। भारतीय साहित्य में रामायण और महाभारत की गणना इसलिए सर्वश्रेष्ठ साहित्य में की जाती है। तुलसी का रामचरितमानस आज भी लोक मंगल की प्रतिष्ठा करने वाला भारत का सर्वश्रेष्ठ जातीय काव्य है। जो साहित्य अपनी युगीन नानाविध चेतना को अभिव्यक्त नहीं करता वह निर्जीव और अकाल ही समाप्त हो जाने वाला होता है।

साहित्य की प्रभाव–क्षमता निर्माणक विध्वंसक हो सकती है। सामान्यतः साहित्य कौमों को जगाता है, सुलाता नहीं। विध्वंस की अपेक्षा निर्माण करता है। प्रेमचन्द कहते हैं– ''जिस साहित्य से हमारी सुरुचि न जागे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति न मिले, हम में शक्ति और गति न पैदा हो, हमारा सौन्दर्य प्रेम न जागृत हो, जो हम में सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने की सच्ची दृढ़ता उत्पन्न न करे वह आज हमारे लिए बेकार है। वह सत् साहित्य कहलाने का अधिकारी नहीं है (4)।'' साहित्य संस्कृति का वाहक है। वह नवीन ज्ञान से आलोकित कर पुनर्जागरण का सन्देश समाज को देता है। सामाजिक, सांस्कृतिक प्रतिमानों का प्रतिबिम्बन ही साहित्य नहीं करता बल्कि वह नयी परम्पराओं का सृजन भी करता है। अज्ञेय की मान्यता है कि हर कृतिकार नया कुछ लिखता ही नहीं, परम्परा को नया सन्दर्भ भी देता है (5)। ''साहित्य जीवन में आने वाले उतार–चढ़ाव, संघर्ष तनाव एवं विषम परिस्थितियों से पूर्ण जूझने की क्षमता प्रदान कर उसे मुक्ति पथ पर अग्रसर करता है, वही साहित्यजन–साहित्य है, जो जनता के जीवन मूल्यों को, जनता के जीवन आदशों को प्रतिष्ठित करता हो उसे मुक्तिपथ पर अग्रसर करता हो, इस मुक्तिपथ का अर्थ राजनैतिक मुक्ति से लगाकर अज्ञान से मुक्ति तक है (6)।'' आन्दोलनों में साहित्य की भूमिका को निरूपित करते हुए प्रेमचन्द ने कहा है दुनिया में मानव जाति के कल्याण के लिए जितने आन्दोलन हुए हैं, उन सभी के लिए साहित्य ने ही जमीन तैयार की, बीज भी बोये और उनकी सिंचाई भी की। रुचेक की मान्यतानुसार महान साहित्य के विकास के साथ प्रत्येक महान सामाजिक आन्दोलन का सम्बन्ध रहा है। साहित्य में चेतना का अर्थ ज्ञानात्मक मनोवृत्ति के रूप में है। जिस प्रकार चेतना के अभाव में शरीर व्यर्थ है उसी प्रकार चेतना शक्तिरहित साहित्य का होना भी बेकार है।

''साहित्य में सामाजिक चेतना का प्रयोग अज्ञानता को ललकारने वाली विचारधारा एवं समाज को पुनर्जीवित करने वाली शक्ति के रूप में किया जाता है। सामाजिक चेतना समाज एवं देश की परिस्थितियों को समझने और उनका मूल्यांकन करने वाली शक्ति का नाम है (7)।'' समाज की सुप्त "शक्ति को जगाना ही साहित्य का उद्देश्य है। साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। मैनेजर पा.डेय के अनुसार ''साहित्य के स्वरूप, उद्देश्य और विकास का सामाजिक विकास से गहरा सम्बन्ध है। साहित्य मानव–समाज के विकास का परिणाम है और प्रमाण भी। वह मनुष्य की सामाजिक चेतना, चेतना की उपज हैं और सामाजिक चेतना को उपजाने वाला भी (8)।

साहित्य–रचना की प्रक्रिया में समाज, लेखक और साहित्य परस्पर एक–दूसरे को इस तरह प्रभावित करते हैं कि इनमें से प्रत्येक क्रमशः परिवर्तित और विकसित होता रहता है जैसे समाज से लेखक, लेखन से साहित्य और साहित्य से पुनः समाज। साहित्यकार स्रष्टा है। साहित्यकार किसी एक भाषा या जाति का नहीं होता। वह विश्वजनीन होता है। उसका साहित्य विश्व–साहित्य, दर्शन विश्व–दर्शन होता है। वह लिखता अपने समाज के बारे में लेकिन हो जाता है विश्व समाज का। प्रेमचन्द के शब्दों में ''साहित्यकार बहुधा अपने देशकाल से प्रभावित होता है। जब कोई लहर देश में उठती है तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असम्भव हो जाता है, उसकी विशालआत्मा अपने देशबन्धुओं के कष्टों से विकल हो उठती है और इस तीव्रविकलता में वह रो उठता (9)।

वह समाज की अव्यवस्था तथा अनीति से क्षुब्ध हो जाता है। वह क्रान्ति का शंख फूंकने लगता है। इस प्रकार लेखक की चेतना समाज से ही रसग्रहण करती है। तुलसी का लोकनायकत्व उनके साहित्य में निहित समाजहित भावना के कारण ही निर्विवाद रहा। कबीर, दादू, रैदास, मैथिलीशरण गुप्त की वाणी भावनात्मक एकीकरण एवं सामाजिक चेतना के निर्माण में सहायक हुई। भारतीय साहित्यकारों ने इस तथ्य को स्वीकार किया है। "साहित्यकार के साम्राज्य की सीमायें पुनर्निर्माणोन्मुख रहती हैं। उसकी ज्ञान रश्मियाँ समाज में एक नया सवेरा लाने का उद्घोष करती हैं और वे मानव–आत्मा का चितेरा बनकर नये सृजन का पुरोधा बनता है। वह अतीत से सीखकर वर्तमान को पुनर्व्यवस्थित करने तथा भविष्य को गढ़ने में पहल करता है। आगत का निर्माण एवं नयी परम्पराओं का सृजन करता है (10)।

निष्कर्ष

साहित्यकार सामाजिक चेतना का अग्रदूत होता है। साहित्य और समाज एक दूसरे पर आश्रित है, एक के बिना दूसरे का अस्तित्व अधूरा है। अतः साहित्यकार को चाहिए कि वह जनता में ऐसी चेतना का विकास करे जो उस समाज को सुन्दर बना सके, कल्याण की ओर प्रेरित करे एवं पुनर्निर्माणकालीन चेतना जागृत कर समाज को पुन र्निर्माण हेतु प्रेरित कर सके।

संन्दर्भ–सूची

1. डॉ. गुलाब रायः काव्य के रूप, (पृ. 3)
2. भागीरथ मिश्रः काव्य–शास्त्र, (पृ. 287)
3. हिन्दी निबन्ध मालाः प्रथम भाग–नाप्र. सभा, काशी, (पृ. 48)
4. प्रेमचन्दः साहित्य का उद्देश्य, (पृ. 2)
5. सच्चिदानन्द वात्स्यायनः ''अज्ञेय'' लिखी कागद कोरे, (पृ. 64)
6. गजानन माधव मुक्ति बोधः नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र, (पृ. 79)
7. वी. सत्यनारायणः द्विवेदी युगीन काव्य में सामाजिक चेतना, (पृ. 75)
8. मैनेजर पाण्डेयः साहित्य और सर्वहारा (निबन्ध), (पृ. 44)
9. प्रेमचन्दः कुछ विचार, (पृ. 95)
10. वी.ड़ी.गुप्ताः सामाजिक पुनर्निर्माण का समाजशास्त्र और साहित्य, (पृ. 60–65)